Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. VIII, Issue No. XV, July-2014, ISSN 2230-7540

टैगोर का जीवन परिचय एवं दार्शनिक चिन्तन के आयामों का संक्षिप्त मूल्यांकन

AN INTERNATIONALLY INDEXED PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. VIII, Issue No. XV, July-2014, ISSN 2230-7540

टैगोर का जीवन परिचय एवं दार्शनिक चिन्तन के आयामों का संक्षिप्त मूल्यांकन

Moolyankan

Preeti Chauhan

Research Scholar, Monad University, Hapur (U.P.), India

***सार** - परिवर्तन प्रऔति का अटूट नियम है। प्रऔति प्रदत्त भौतिक एवं मूर्त वस्तुएं तो परिवर्तित होती ही रहती हैं साथ-साथ मानव के विचार, दृष्टिकोण, चिंतन एवं दर्शन भी परिवर्तित होते हैं। दर्शन का इतिहास इस परम् सत्य का साक्षी है कि मानवीय समस्याओं के साथ-साथ उनसे सम्बन्धित दार्शनिक विवेचन भी बदलते रहे हैं। इन परिवर्तनों ने नई परिस्थितियों से उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने में मनुष्यों की सहायता की है। निसन्देह एक दार्शनिक के खोज का विषय सत्य का उद्घाटन है। अरविन्द के अनुसार "एक बार पहचाने गये सत्य को हमारे आन्तरिक जीवन और बाहरी क्रियाओं में साक्षात्कार के योग्य होना चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं है तो उसका बौद्धिक महत्व तो हो सकता है परन्तु सर्वांग महत्व नहीं हो सकता।" समकालीन युग में मानववादी दर्शन ने भी मानव जीवन के सभी क्षेत्रों को प्रभावित किया है। जान डीवी के शब्दों में- "दर्शन संस्औति में परिवर्तन करता है। भावी चिन्तन और कर्म के प्रतिमान निश्चित करके वह सभ्यता के इतिहास में सार्थक और परिवर्तनशील योगदान देता रहता है।*

----------X----------

प्रस्तावना

रविन्द्रनाथ टैगोर का जन्म सन् 1861 में कलकत्ता में हुआ था। टैगोर जी को गुरूदेव भी कहा जाता है। टैगोर बहुप्रतिभा के धनी थे। उनकी सर्वाधिक ख्याति साहित्य के क्षेत्र में हुई। सन् 1913 में 'गीताजंली' नामक पुस्तक की रचना पर उन्हें योरोपिय देशों ने किसी प्रथम भारतीय के रूप में नोबल पुरस्कार प्रदान किया। (टैगोर से पूर्व विख्यात साहित्य रचना के लिये यह पुरुस्कार 12 यूरोपियनों या अन्य पश्चिम देशों के साहित्यकारों को दिया जा चुका था)। छात्रों को प्रकृति के सानिध्य में शिक्षा प्रदान कराने के उद्देश्य से उन्होंने शान्ति निकेतन की स्थापना की। उन्होंने लगभग 2,230 गीतों, अनेक उपन्यासों, नाटकों आदि की रचना की। निबन्ध पत्र आदि के माध्यम से समाज को जागरूक कर शिक्षा प्रदान की। विश्व के अनेक देशों की यात्रा की एवं व्याख्यान दिये। अपने पिता देवेन्द्र नाथ टैगोर की 13 सन्तानों में से सबसे छोटे थे। देवेन्द्र नाथ टैगोर पूर्व से ही सम्पन्न परिवार एवं शिक्षा के धनी तथा धार्मिक व्यक्ति थे।

टैगोर के दर्शन की पृष्ठभूमिः-

टगौर के दार्शनिक चिन्तन पर उनके पारिवारिक परिवेश के अतिरिक्त जिन बातों का प्रभाव पड़ा, वे इस प्रकार हैं-

- टैगोर के दार्शनिक चिन्तन पर उपनिषदों का गहरना प्रभाव है। इनकी दार्शनिक कृतियों साधना, परसनैलिटी, क्रिएटिव यूनिटी, दा रिलीजन ऑफ मैन आदि में उपनिषद के ईश, छांदोग्य, श्वेताश्वर के मुख्यतः उद्धरण मिलते हैं। उपनिषद का प्रभाव टैगोर को विरासत में मिला था, यह इन्होंने स्वीकार किया है। वेद एवं उपनिषद को इन्होंने अक्षय विवेक का अमरकोष कहा है। इनकी जीवन, जगत के प्रति आनन्दवादी दृष्टि उपनिषद के ''आनन्दाध्येव खल्वियानि भूतानि जायन्ते'' से गुंफित हुई। यही कारण है कि इनके दर्शन में सत्य के सुंदरम् पक्ष की अद्भुत अभिव्यंजना हुई है।

- इनके दर्शन पर विशाल संस्कृत वांड्.मय का प्रभाव है। इनकी कृतियों को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि टैगोर ने संस्कृत साहित्य के विशाल सागर में आकंठ निमग्न होकर स्नान किया। रामायण, महाभारत, रघुवंश, कुमार संभव, शाकुन्तलम, ऋतुसंहार, मेघदूत, उत्तरराम चरित्र, गीत गोविन्द, भामिनी विलास आदि का स्थान-स्थान पर समीक्षात्मक आलोकन-विश्लेषण किया है। महाभारत को इन्होंने देश की आत्मा कहा है।

- टैगोर के दार्शनिक चिन्तन पर वैष्णव कवियों का प्रभाव अत्यन्त स्पष्ट होता है। हमारे प्राचीन वैष्णव कवियों ने शाश्वत देव-प्रेम को गाया है, यद्यपि उन्होंने ससांरिक प्रेम की भाषा का प्रयोग किया है। टैगोर की कविताओं में हमें प्रायः वैष्णवकवियों की कविताओं का ही आभास होता है, और इनके दिव्य प्रेमगीतों में हमें जयदेव, विद्यापति एवं चंडीदास की अनुभूतियों की झाँकी मिलती है। लेकिन विद्वान इन्हें अभेदवादी- अद्वैतवादी परम्परा में रखते हैं डॉ0 दत्ता ने तो प्रतिबंधित अर्थ में ही उन्हें भक्तिवादी परम्परा में रखा है। किन्तु डॉ0 नागराज राव ने स्पष्ट शब्दों में उन्हें भेदवादी-भक्तिवादी बताया है। अभदेवाद एवं भेदवाद, अद्वैतवाद एवं भक्तिवाद की अनूठी गंगा-यमुना टैगोर के दर्शन में देखने को मिलती है। डॉ0 नरवणे का यह कथन सत्य है, कि "वस्तुतः दोनों परम्पराओं में जो सर्वोत्कृष्ट है, उसे टैगोर ने लिया।" ैगोर का प्रकृतिदर्शन शंकर एवं रामानुज की अपेक्षा चैतन्य एवं श्री जीवगोस्वामी के अचिंत्य भेदाभाव के निकट लगता है। इनमें भेदवाद का उभार पाया जाता है। जिसका कोई दार्शनिक समाधान नहीं है। टैगोर ने इसे ही दृष्टि का मूल रहस्य माना है। अचिन्तय भेदाभेद का समूचा दर्शन आदि उपनिषदीय "रसो वैसः" से आप्लावित है तो टैगोर का दर्शन भी उसी भक्ति के सार्वभोम रस से संयुक्त है।

- टैगोर पर हिन्दी के सूफी कवि कबीर एवं दादू के साथ-साथ बंगाल के कुछ लोकगीतों को गाने वालों विशेषतः बाउलों का भी प्रभाव है। बाउलों के विषय में इन्होंने कहा, "जब मैं सियालदह में था तो मै। बाउलों से निकट का सम्बन्ध रखता था, और उनसे बातचीत किया करता था, तथा यह यथार्थ है कि मैंने बाउल गीतों की ध्वनियों को अपने अनेक गीतों में

www.ignited.in

मिलाया है। इनकी "क्रिएटिव यूनिटी" में बाउलों का अत्यंत समधुर काव्य-बिम्ब मन को विभोर कर देता है।

- इनके दार्शनिक चिन्तन पर बौद्ध दर्शन का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। बौद्ध दर्शन के प्रति इनकी आस्था सुदुर पूर्वी देशों के पर्यटन के बाद बौद्ध कथानकों पर इनके बहुत से निबन्ध एवं गीत आधारित हैं। टैगोर के अनुसार बौद्ध धर्म ने जगत को एक नया आलोक दिया। उन लोगों ने इस बात की अनुभूति की प्रत्येक व्यक्ति में बुद्ध होने की क्षमता है यानि अनंत मूर्तिमान हो सकती है। इन्होंने कहा कि बौद्ध काल के आते ही हमारे देश की गानवता अपनी अत्यधिक गहराई तक स्पांदित हुई। पूरे एशिय महाद्वीप में मस्तिष्क कीजो स्वतन्त्रता इसने उत्पन्न की, वह सर्जनात्मक वैभव के रूप में भरपूर ढंग से छा गयी।

- तत्कालीन देशीय एवं अन्तर्देशीय बौद्धिक क्रांति ने भी टैगोर को प्रभावित किया। धर्म के क्षेत्र में राजा राम मोहन राय ने, साहित्य के क्षेत्र में बंकिमचन्द्र चटर्जी ने, समाज व राजनीतिक क्षेत्र में उस समय के बदलते हुए मूल्यों ने। गेटे के बाद टैगोर ने ही इतनी गहराई से इतने अधिक स्त्रोतों का पान किया अथवा इतने विभिन्न विचारों को विलष्ट दार्शनिक अनुशासन के अन्तर्गत लाया।

टैगोर का दार्शनिक चिन्तनः-

टैगोर कवि दार्शनिक हैं। इनका दर्शन क्लिष्ट तार्किक पद्वति पर आधारित न होकर एक मनीषी दृष्टा की अनुभूति पर आधारित है । ये अपने को दार्शनिक कहने में संकोच का अनुभव करते हैं। कुछ लोगों का मत है कि टैगोर का कोई अपना दर्शन नहीं है। इसलिए इन्हें दार्शनिकों की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। इनके अनुसार टैगोर केवल कवि तथा कलाकार हैं, दार्शनिक नहीं। किन्तु हम उनके विचार से सहमत नहीं है। यदि दर्शन, जीवन जगत के प्रति एक दृष्टि है तो निःसन्देह ये एक दृष्टा है, दर्शनिक हैं। विभिन्न दार्शनिक तत्वों के विषय में इनके निश्चित विचार हैं और इन विचारों को इन्होंने अत्यन्त स्पष्ट में रखा है। ये उन कुछ दार्शनिकों में से एक हैं जो महान थे और उन कवियों में से एक हैं जिन्होंने अपने दर्शन को स्वयंमेव आकृति दी है।

टैगोर का दर्शन आस्तिकावादी दर्शन है। इनके दार्शनिक विचार इस प्रकार हैं:-

(क) **जगत एवं प्रकृति :-** टैगोर का विचार है कि मनुष्य सत्य के निकट है किन्तु फि भी उस सत्य का ज्ञान नहीं हो पाता जिसका कारण ये माया को मानते हैं जिसके सत्य व असत्य दो रूप है। एक रूप में माया का अस्तित्व है तथा दूसरे रूप में नहीं। माया का प्रचार इस सम्पूर्ण जगत में है। इस प्रकार जगत वास्तविक है तथा आत्मविकास का एक साधन है। विश्व में जो भिन्न-भिन्न प्रकार के रूप दिखलाई देते हैं, वे प्रकृति हैं तथा प्रकृति के समस्त रहस्यों का ज्ञान होना मानव का धर्म है। इस प्रकृति में जीव व जड़ सभी जगत के अंग हैं, जिन्हें जानना सभी के लिए आवश्यकता है। जीव एवं जगत एक दूसरे के पूरक है, ये एक-दूसरे के बिना अधूरे हैं। जगत की उपयोगिता जीव के लिए है। जीव के अभाव में जीव की अभिव्यक्ति असम्भव है। टैगोर के अनुसार पृथ्वी और आकाश मनुष्य के मस्तिष्क के रेशे से बुने हुए हैं। अर्थात् जगत को जीव की मूल्य प्रदान करता है।

निःसन्देह जगत तथा प्रकृति के प्रति पश्चात्य धारण विरोध की है। अतः पश्चिचम में प्रकृति पर विजय पर विजय प्राप्त करने में सर्वदा आनन्द की अनुभूति की है, मानों हम ऐसे संसार में रह रहे हैं जिसकी सभी चीजें, सारी व्यवस्था हामरे प्रतिकूल है। इस प्रकार की धारणा का कारण टैगोर ने नगर की चहारदीवारी मे रहने की प्रवृत्ति एवं मन के प्रशिक्षित होने को बताया है।[26] इसी सन्दर्भ में इन्होंने कालीदास एवं शेक्सपीयर की तुलना की है एव उनकी प्रकृति सम्बन्धी धारणा का बड़ा ही विशद् चित्राण किया है।

टैगोर ब्रह्म को सत्य-चित-आनन्द स्वरूप मानते हैं। इन्होंने कहा कि प्रकृति तथा मनुष्य दोनों से ही ईश्वर एक-दूसरे से बंधे हैं। ये मानवतावादी विचारधारा से प्रभावित है, और इन्होंने ईश्वर को भी मानवकृत गुणों से युक्त देखा है। टैगोर की यह मान्यता है कि ईश्वर को प्राप्त करने के लिए सृष्टिः तत्वों में विभक्त है, परन्तु इन समस्त तत्वों में मनुष्य अति महत्वपूर्ण है। इसका कारण यह है कि आन्तरिक कल्याण और शक्ति आकाश के तारों की अपेक्षा मनुष्य की आत्मा में अधिक है। टैगोर का विचार है कि मनुष्य का प्रकृति के साथ अटूट सम्बन्ध है। यदि मनुष्य प्रकृति के साथ सम्बन्ध का अनुभाव नहीं करता है तो वह कारागार में बन्द ऐसे बंदी की भाँति है जो कारागार की दीवारों से परिचित है। प्रकृति एवं मनुष्य के मध्य जो सम्बन्ध है, वह एक जीवन शक्ति है। जिसे टैगोर ईश्वर सृष्टि कहते हैं और इस प्रकार प्रकृति एवं मानव दोनों ही ईश्वर के रूप हैं। टैगोर के अनुसा परवर्ती अंग्रेजी के कवियों में वर्ड्सवर्थ, शैली आदि ने प्रकृति का जो सुमानोहर चित्रा प्रस्तुत किया है वह भारतीय प्रकृति दर्शन से प्रभावित होने के कारण हुआ है, जो जर्मनी के माध्यम से समस्त पश्चिमी जगत में छा गया। पश्चिमी के इस मूल का कारण टैगोर के अनुसार मनुष्य एवं प्रकृति को स्वतःपूर्ण एवं निरपेक्ष सिद्धान्त मानने के कारण है।

(ख) **सत्य ज्ञानः-** टैगोर ने हा हे कि संसार का सत्य उसके अनेक जड़ पदार्थों में नहीं है। अपितु उसके माध्यम से अभिव्यक्त होने वाली एकता में निहित है। हमारा वस्तुओं के विषय में ज्ञान उन्हें विश्व के सम्बन्ध में जानना है, उसके सम्बन्ध में जोकि परम सत्य है। टैगोर के अनुसार संसार का साधारण ज्ञान केवल तथ्यात्मक है तथा परम तत्व ही वास्तविक सत्य है। इनके अनुसार तथ्य से सत्य का प्रकाश वास्तव में प्रकाश है। टैगोर मानते हैं कि सत्य ज्ञान को प्राप्त करने हेतु प्रेम की अति आवश्यकता है किन्तु वह कृतिम न होकर स्वाभिक होना चाहिये। ये लिखते हैं कि "हमारी तर्कशक्ति, सच्ची मानवीय एकता के सत्य को क्या नाम दे सकती है। इस तथ्य को अनदेखा नहीं किया जा सकता कि जब हम स्वयं को दूसरों में अनुभव करते हैं तब हम अपपने सर्वोच्च स्वरूप को प्राप्त करते हैं और यही प्रेम की परिभाषा है। यह प्रेम, हमको पूर्ण तथा अन्तिम सत्य प्रदान करता है। प्रेम किसी प्रकार का जाति-भेद या रंग-भेद नहीं जनता। प्रेम की भावना विभिन्नता के अनावश्यक के बन्धनों से स्वतन्त्रता प्रदान करती है, तथा हमारी चेतना को आन्तरिक शक्ति देती है, यही नागरिकता की उच्च भावना है।

(ग) **ईश्वर या ब्रह्म :** टैगोर ने ईश्वर के अस्तित्व को माना है और कहा है कि ईश्वर का तर्क द्वारा नहीं अपितु प्रेम के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। ये कहते हैं कि हमें ईश्वर को उसी प्रकार अनुभव करना चाहिये जिस प्रकार हम प्रकाश का अनुभव करते हैं। ये ईश्वर को "सर्वोच्च मानव" के रूप में मानते हैं। यद्यपि टैगोर अद्वैतवादी हैं किन्तु ब्रह्म समाज से प्रभावित होने के कारण ये "सर्वेश्वरवादी ब्रह्मवादी को स्वीकार करते हैं। इनका विचार है कि मानवता की सेवा से ही ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है, क्योंकि ईश्वर का ही रूप मानव है। मानव प्रेम ही ईश्वर प्राप्ति की एक मात्रा पूंजी है। टैगोर कुछ सीमा तक सौन्दर्यात्म समेवित ब्रह्ममवादी भी है। ये कभी-कभी ईश्वर को मानव शरीर पर निराकर ही मानते हैं। इन्होंने सत्यं, शिव, एवं सुन्दरम् तीनों को ईश्वर के गुण बतायें है जिनके साक्षात्कार करने से मनुष्य को सच्चे आनन्द की अनुभूति होती है।

(घ) आत्मा व जीव : टैगोर ने गीतांजली में ईश्वर तथा मनुष्य को दा सत्यों के रूप में माना है। ये व्यक्ति की आत्मा को ब्रह्म से प्रथक मानते हैं। इनके शब्दों में, "आत्मा को पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिय। एक स्वान्त्र वस्तु ही दूसरी स्वतन्त्र वस्तु से समन्वय रख सकती है। ईश्वर ने हमें यह

स्वतन्त्रता तथा समझदारी दी है। उसने हमें यह बताया है कि मेरे पास स्वतन्त्र बनकर आओ, कोई वस्तु जो परतन्त्र हैं, मेरे पास नहीं आ सकती है।" इससे स्पष्ट होता है कि टैगोर आत्मा को स्वतन्त्र मानते हैं तथा यथार्थ की अनुभूति भी तभी सम्भव मानते हैं, जब आत्मा स्वतन्त्र हो। यह स्वतन्त्र आत्मा यह प्रयास करती है कि वह महान स्वतन्त्र आत्मा आर्थत् ईश्वर में लीन हो जाय। टैगोर का विचार है कि मनुष्य की आत्मा का लक्ष्य ब्रह्म में लन होना मात्रा नहीं है, अपितु स्वयं को पूर्ण बनाना है। ईश्वर, पूर्णता का अनन्त आदर्श है, मनुष्य की जानन्द प्राप्त करने की शाश्वत प्रक्रिया है। ये आत्मा के तीन रूपों में विश्वास करते हैं। प्रथम रूप, रक्षा भावना का, द्वितीय अपने अस्तित्व के ज्ञान का तथा तृतीय- आत्माभिव्यक्ति का इन्होंने तीसरे रूप, रक्षा भावना का, द्वितीय अपने अस्तित्व के ज्ञान का तथा तृतीय-आत्माभिव्यक्ति का। इन्होंने तीसरे रूप को आत्मा का वास्तविक रूप माना। इस रूप में जीव अपनी संकीर्णता तथा सर्वोपरिता का परित्याग करके व्यापकता को धारण कर मानववादी बन जाता है। टैगोर का विचार है कि अपने उच्च स्तरीय रूप में एक व्यक्ति की आत्मा दूसरे की आत्मा का अनुभव करती है, तथा दूसरे के सामने अपने आपको मालूम करती है। इस दृष्टि से टैगोर ने मानवतावादी दृष्टिकोण का सर्जन किया।

(ड़) **प्रेम व भक्तिः-** टैगोर के अनुसार जीवन का सिद्धान्त अनेकता में एकता है न कि अनेकतावहीन एकता। इनके अनुसार, जब तक बीज रहता है वह एक रहता हैं। यह उसकी संघर्षविहीन शान्तावस्था है। किन्तु ज्योहि अंकुरण होता है, अनेकता फूट पड़ती है। जीवन प्रारम्भ हो जाता हैं यहा पर टैगोर के दर्शन पर हेगेल तथा रामानुज का प्रभाव दिखाई देता है। अद्वैत यदि मात्रा अद्वैत है तो शून्य है, यह विशीष्टाद्वैत है। तार्किक दृष्टि से हेमेल व रामानुज के दर्शन में अन्तर्विरोध है, क्योंकि ये एक एवं अनेक दोनों को सत्य मानते हैं, किन्तु टैगोर का कहना है कि "इस अन्तर्विरोध के बावजूद यथार्थ भी तो यही है। अनन्त असीमित का प्रकाशन शान्त असीम में हुआ हैः निःसन्देह यह एक रहस्य है, किन्तु सृष्टि के मूल में भी तो यही रहस्य है। टैगोर कहते हैं कि रहस्य का समाधान तार्किकता से परे व्यक्तिगत आनन्दनुभूति द्वारा किया जा सकता है। ये आनन्द के स्थान प प्रेम की भावना द्वारा भी इस रहस्य की व्याख्या करते हैं। इन्होंने प्रेम के द्वारा ही ब्रह्म के निर्गुण एवं सगुण दोनों रूपों का समन्वय किया है।

टैगोर के अनुसार प्रेम ही इस विश्व का मूल आधार है। यह सत्य है कि जब हम स्वयं को दूसरों में अनुभव करते हैं तब हम अपने सर्वोच्च स्वरूप को प्राप्त करते हैं और यही प्रेम की परिभाषा है। यह प्रेम हमको पूर्णता तथा अन्तिम सत्य प्रदान करता है। प्रेम हमको वह क्षेत्र प्रदान करता है, जहाँ हम मानवीय आत्मा के सर्वोच्च धन को, सहानुभूति व सहयोग पूर्ण ज्ञान तथा सेवा के सर्वोच्च मूल्य द्वारा प्राप्त करते हैं। टैगोर मानते हैं कि प्रेम में सभी विरोध समन्वित हो जाते हैं। तात्विक चिंतन की दृष्टि से अद्वैतवाद में विरोध है, किन्तु प्रेम में अद्वैत एवं द्वैत का विरोध समाप्त हो जाता है। प्रेम में एकत्व की अनुभूति के लिए द्वैत होना आवश्यक है। टैगोर ने प्रेम का इतने व्यापक अर्थ में प्रयोग किया है कि विश्व के समस्त अन्तरर्विरोध का इसमें समाधान हुआ दिखाई देता है। ये कहते हैं कि परमात्मा एवं आत्मा में प्रेम सम्बन्धानुभूति ही वास्तविक धार्मिक चेतना है। प्रेम के एक सिरे पर संयोग है तो दूसरे पर वियोग। प्रेम, असीमित एवं सीमित की शक्ति एवं सौन्दर्य का, रूप एवं रस का समन्वय है।

टैगोर के विचारों पर वल्लभ सम्प्रदाय की छाप है। ये कहते है कि भक्ति ही परमशक्ति की प्राप्ति का मार्ग है। इनके अनुसार भक्ति एक ऐसा साधन है जो एक साधारण पुरूष के लिए भी सम्भव है। भक्ति प्रेम की परमावस्था है। ये भक्ति की आधारशिला प्रेम को ही मानते हैं, या यह कहना चाहिए कि ये प्रेम व भक्ति को एक मानते हैं। इनके अनुसार इस नश्वर जगत में ब्रह्म का साक्षात्कार केवल मानव प्रेम से ही हो सकता है। प्रेम का मार्ग एवं साधन ज्ञान के मार्ग एवं साधन से ऊँचा है। ज्ञान का सम्बन्ध बुद्धि से होता है, जो हमें शेष से इलग करती हैं किन्तु प्रेम में यह अलगाव नहीं पाया जाता । टैगोर के अनुसार प्रेम में लय होती है, और लय से लीनता यानि प्रेम संश्लेषण होता है। इस प्रकार परमतत्व प्राप्ति बुद्धि से न होकर अन्तःकरण से ही है। प्रेम व भक्ति की साधना के कारण टैगोर अपने काव्यों में रहस्यमय हो गये किन्तु रहस्यवादी होते हुए भी टैगोर जगत से, प्रेम पाने के लिए कहते हैं।

(च) **धर्मः-** टैगोर ने कहा कि मेरा धर्म मानव का धर्म है। जिसमें आनन्द की परिभाषा मानवता है। इस प्रकार ये धर्म को व्यापक रूप में लेते हैं। इनके अनुसार धर्म मात्रा नेताओं के संदेशों मे नहीं अपितु वह तो कला एवं प्रकृति से प्राप्त आनन्द में है। संस्कृति, समाज की प्राप्ति में हैं, विभिन्न देशों के प्रति सद्भावना में हैं, समाज के निर्धन, निरक्षर एवं निम्न लोगों की सेवा में है, शान्ति, स्थिरता एवं उच्च आदर्शों एवं मूल्यों की स्थापना एवं उनके पालन में है, तथा अन्तिम आध्यात्मिक सत्य की खोज प्राप्ति एवं प्रसार में है।

टैगोर धर्म को मनव का स्वाभाविक गुण मानते हैं। इनके अनुसार मानव अपना तादात्मय आनंत से नहीं कर सकता, किन्तु यह स्वभाविक गुण मनोवैज्ञानिक गुण नहीं है। मनोवैज्ञानिक गुणों से मनुष्य में पशुत्व का निर्माण होता है। किन्तु धर्म से वह पशुत्व को छोड़कर अपने में संपूर्ण मानवता, का अनन्त का साक्षात्कार करता है। टैगोर ने इस सन्दर्भ में चीनी संत लाओ-जो को उद्घृत किया है कि वह मर सकता है किन्तु विनष्ट नहीं होगा, क्योकि उसे नित्य जीवन की प्राप्ति हो जाती है। अर्थात् धर्म से मानव का पशुत्व समाप्त हो जाता है और वह देवत्व को प्राप्त करता है। सारे उत्कृष्ट मूल्य जो ज्ञान, क्रिया, चरित्र एवं सर्जनात्मक कृतियों में व्यक्त होते हैं, वे धर्म के ही परिचायक हैं यही उपनिषद का सिंहनाद है। "तं वेधं पुरूष वेद यथा मा वे मृत्युः परिव्यथा" अर्थात् उस पुरूष को जानों, तुम मृत्यु को प्राप्त न होओ। इस प्रकार टैगोर का कहना है कि सभ्यता से मनुष्य के धर्म का परिचय होता है न कि उसकी चालाकी, शक्ति एवं धन का। इस संदर्भ में टैगोर ने अपना एक संस्मरण दिया कि "उन्हें एक बार सौ मील दूर कलकत्ता पहुंचना था। कार की यंत्रा रचना की किसी गड़बड़ी के कारण प्रत्येक आधे घण्टे में उन्हें पानी की आवश्यकता पड़ती थी। प्रथम गांव में जहाँ उन्हें रूकना पड़ा किसी ग्रामीण ने पानी की व्यवस्था की, यद्यपि उसे कठिनाई उठानी पड़ी। किन्तु पुरस्कार दिए जाने पर उस गरीब ने मना कर दिया। यह कहानी लगभग पन्द्रह गाँवों में इसी प्रकार आवश्यकता एवं मांग के नियम के आधार पर अच्छा व्यापार किया जा सकता है, किन्तु वह आदर्श जिसे वे अपन धर्म समझते हैं, वह उनके जीवन में समाहित हो जाता है।

(छ) **मानवः-** टैगोर मानव मे आस्था रखते हैं, इसलिए इन्हें उच्च कोटि का मानवतावादी कहा जा सकता है। एक महाकवि होने के नाते इन्होंने संवेगों एवं स्थायी भावों के दमन का परामर्श नहीं दिया वरन् व्यक्ति की सभी शक्तियों के सामांजस्यपूर्ण विकास का समर्थन किया। ये व्यक्ति के सम्मान एवं उसकी स्वतन्त्रता में आस्था रखते हैं। ये धर्म, भाषा तथा लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नहीं मानते। इनके अनुसार सहयोग से व्यक्ति एवं राष्ट्र की निर्धनता समाप्त हो सकती है। टैगोर ने मानव को "सर्वोच्च स्थान" दिया है। इन्होंने मानव में ईश्वर के रूप को देखा है और इस प्रकार मानव को यथार्थता प्रदान की है, तथा साथ ही ईश्वर में भी मानवीय गुणों को देखने को प्रयत्न किया है। इन्होंने मनुष्यत्व में ईश्वरत्व को ही नहीं देखा अपितु व्यवहार में भी प्रकट किया है। इन्होंने कहा कि ईश्वर ने जिन भी वस्तुओं का सृजन किया है, वह सभी में व्याप्त है, किन्तु मानव इनकी सम्पूर्ण सृष्टि में सबसे महत्वपूर्ण है। मानव अपूर्व है

क्योकि उसमें ईश्वर विशेष रूप से व्याप्त है। इस दृष्टिकोण के आधार पर टैगोर ने कहा कि अनन्त का ज्ञान और शक्ति आकाश के तारों की अपेक्षा मानव की आत्मा में अधिक मिलती है। मानव ईश्वर के सितार का स्वर्णतार है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर के जीवन का क्रियात्मक दृष्टिकोण से परिचयः-

रवीन्द्रनाथ टैगोर एक भारतीय बंगाली कवि थे। उनका वास्तविक नाम रवीन्द्रोनाथ ठाकुर लिखा जाता था। वे एक दार्शनिक और एक कलाकार भी थे। उन्होंने न केवल कई कहानियां, नोवेल्स (उपन्यास), ड्रामें लिखे बल्कि कई गीतों व संगीतों का निर्माण भी किया। 19वीं सदी के अन्त एवं 20वीं सदी के प्रारम्भ में उनका लेखन बंगाली संस्कृति से अधिक प्रभावित रहा। 1913 में उन्हें अपने साहित्य पर नोबेल पुरस्कार मिला। वे इस पुरस्कार को पाने वाले प्रथम एशियाई थे। लोग उन्हें 'गुरूदेव' कहकर भी पुकारते थे।

टैगोर जी का जन्म कोलकाता शहर की (एक सम्पन्न परिवार) द्वारकानाथ टैगोर गली सं0 6, जोरांसको ठाकुर बाड़ी में हुआ था। टैगोर जन्म से एक बंगाली ब्राह्मण थे। उन्होंने अपनी पहली कविता मात्रा 8 वर्ष की उम्र में लिखी। उन्होंने अपना प्रथम विशाल काव्य संग्रह सन् 1877 में प्रकाशित किया। उन्होंने अपनी प्रथम लघु कथा और नाटक मात्रा 16 वर्ष की आयु में लिखे।

कार्य क्षेत्र :-

उन्होंने शैक्षिक विकास, ग्रामोत्थान, संगीत, कला तथा अंगरेजी व बांग्ला साहित्य लेखन आदि के क्षेत्र में कार्य किया।

उपन्यास :

टैगोर ने 8 उपन्यास और 4 लघु उपन्यास लिखें। 'गोरा', 'चतुरंग', 'शेशर कोबिता', 'चार ओघे' और नौकाडूबी घर-बार जैसे उनके कुछ प्रमुख उपन्यास है। 'काबूलीवाला' टैगोर जी का बाल साहित्य है। कई फिल्मों की कहानियां टैगोर के उपन्यास पर आधारित हैं। कई फिल्मों में टैगोर द्वारा निर्मित संगीत की धुनों को भी चुना गया है। टैगोर ने अनेक यथार्थ पर आधारित पुस्तकें भी लिखीं।

नाटक-सम्बन्धी भाग :-

जब टैगोर केवल 16 साल की उम्र के थे, तो उन्होंने अपने भाई ज्योतिरिन्द्रनाथ टैगोर द्वारा संचालित नाटक में प्रर्दशन किया। बीस वर्ष की आयु में इन्होंने एक 'वाल्मीकि प्रतिभा' नामक नाटक लिखा, जिसमें वाल्मीकि के जीवन का वर्णन है। उनके डाकू से ज्ञानी पुरूष बनने, देवी सरस्वती का आशीर्वाद मिलने तथा उनके रामायण लिखने आदि घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। उनके द्वारा लिखित अन्य उल्लेखनीय नाटक 'डाक-घर' है। इस नाटक ने यूरोप के विभिन्न भागों से समीक्षा प्राप्त की थी। 1890 में उन्होंने 'विसर्जन' नामक नाटक लिख, कई विद्वानों का विश्वास है कि यह उनका सर्वोत्तम नाटक है।

लघु कथाएँ :-

टैगोर ने 1891-95 के समयान्तराल में अनेक लघु कथाएँ लिखी; गल्प-गुच्छ नामक कहानी संग्रह तीन भागों में है जिसमें 84 कहानियाँ हैं। टैगोर ने इनमे से आधी कहानियाँ 1891-95 तक ही लिख दी थी। यह संग्रह आज भी बांग्ला साहित्य में अपनी लोकप्रियता बनाए हुए है। टैगोर को कहानियाँ लिखने की प्रेरणा और विचार अपने वातावरण, विशेषकर भारतीय गांव की जीवन शैली से मिले।

काव्यः-

टैगोर की कविताओं में अत्यधिक विभिन्नता मिलती है तथा इनमें विभिन्न शैलियों का प्रयोग हुआ है। उन्होंने 15वीं तथा 16वीं शताब्दी के महान कवियों से प्रेरणा ली। साथ ही ये प्राचीन लेखक जैसे - व्यास इत्यादि से भी प्रेरित थे। बंगाल के लोक गायकों से भी इनका काव्य-शैली प्रभावित है। इनकी अनेक कविताओं में लयात्मक विशेषता विद्यमान है। गीताजंलि उनका सर्वप्रथम कार्य संग्रह है जिस पर उन्हें नोबिल पुरुस्कार प्राप्त हुआ।

संगीत और कलाः-

टैगोर ने 2,230 गीत लिखे और वे एक प्रजनक चित्राकार भी थे। उनके गीत रविन्द्र संगीत के नाम से संकलित है। जो उनके साहित्य की गहराई का परिचय देते हैं। प्रमुखतयाः कविताओं या उपन्यास के अंशों, कहानियों या नाटकों में स्पष्ट है। उनका हिन्दुस्तानी संगीत ठुमरी स्टाइल में मानवीय संवगों को उकेरने में सफल रहा। उनके गीत मनुष्य के मनोभावों के समूचे सरगम है।

'तबु मोने रेखो' टैगोर की अपनी आवाज में गाया गया गीत है जिसकी अवधि 3 मिनट 3 सेकण्ड है। यह गीत 1887 सी0ई0 (बंगाली वर्ष के अनुसार 1294) में लिखा गया। टैगोर बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। सितार वादक उस्ताद विलायत खान और सरोद वादक बुद्धदेव दास गुप्ता व अमजद अली खान भी उनसे अति प्रभावित थे। उनका गीत-संग्रह व्यापक रूप से लोकप्रिय है, सम्भवतः उनके गीत-संगीत का बंगाली जानने वाले लोगों पर वही प्रभाव है जो प्रसिद्ध कवि विलियम शेक्सपीयर की कविताओं का अंग्रेजी बोलने वाले लोगों पर है। ऐसा कहा जाता है कि उनके गाने बंगाली साहित्यिक मंथन और साम्प्रदायिक तड़प के पांच सदियों के परिणाम है। 'धन गोपाल मुखर्जी' ने कहा है इनके इन गीतों का सौन्दर्य सांसारिक वस्तुओं से कहीं बढ़कर है और ये मानवीय भावनाओं की सभी सीमाओं और श्रेणियों को व्यक्त करते हैं। इस कवि ने सभी बड़े या छोटे, गरीब या अमीर के लिए आवाज दी है। गंगा के गरीब नाविक हों या समृद्ध जमींदार सभी अपनी मनोभावनाओं की आकृति उनके गीतों में पाते थे। श्रीलंका के राष्ट्रगान का निर्माता श्रीलंका माथा टैगोर के ही शिष्य थे और यह गीत टैगोर की शैली से ही प्रभावित है।

पालन-पोषण एवं प्रशिक्षणः-

'रवि' (रवीन्द्रनाथ टैगोर) की पालन-पोषण अधिकांशतः उनके नौकरों की देखरेख में हुआ। उनकी माता का देहान्त टैगोर के बचपन में ही हो गया था और उनके पिता का अधिकांश समय यात्राओं में बीतता था। टैगोर के सबसे बड़े भाई द्विवेजन्द्रनाथ एक सम्मानित दार्शनिक और कवि थे। उनके एक भाई सत्येन्द्रनाथ पहले ऐसे भारतीय थे जो ऑल यूरोपियन इण्डियन सिविल सर्विस में नियुक्त हुए थे और एक अन्य भाई ज्योतिरिन्द्रनाथ एक संगीतज्ञ, गीत-लेखक और नाटककार थे। उनकी बहन स्वर्ण कुमार एक उपन्यासकार बनी। उनके एक भाई हेमेन्द्रनाथ बोस ने उन्हें गंगा जी में तैराकी, पर्वतारोहण, जिम्मास्टिंक और जूड़ों व कुश्ती के अभ्यास द्वारा उनको शारीरिक रूप से हष्ट-पुष्ट रखने के लिए प्रशिक्षित किया। उन्होंने चित्रकला, एनाटॉमी, भूगोल, इतिहास, साहित्य, गणित, संस्कृत एवं अंग्रेजी जो उनके प्रिय विषय थे सबका ज्ञान प्राप्त हुआ।

निष्कर्ष :-

आज के वैज्ञानिक युग में विज्ञान ने मानव जाति के कल्याण के लिए नई आशाओं और आकाक्षाओं को बढ़ाया है, इसलिए यह आवश्यक हो गया है कि बालकों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास किया जाय।

मनोविज्ञानिक सिद्धान्तों द्वारा भी शिक्षा में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये जाए। टैगोर ने एक शिक्षक के लिए बाल मनोविज्ञान का ज्ञान आवश्यक समझा और यह माना कि इसके द्वारा अध्यापक छात्रों के अधिक समीप आ सकता है। भारतीय शिक्षा शास्त्रियों में सर्वप्रथम टैगोर ने ही मनोवैज्ञानिक विधियों का अपने शिक्षण संस्थान में प्रयोग किया। ये मानते हैं कि शिक्षा का आधार व्यावहारिक तभी हो सकता है, जब उसे मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया जाय।

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

- बनर्जी, हीराण्यमय (2001) "बिल्डर्स ऑफ मौडर्न इण्या, रवीन्द्रनाथ टैगोर" पब्लिकेशन डिवीजन : मिनिस्टरी ऑफ इनफोरमेशन एण्ड ब्रोडकास्टिंग" 2005
- कालेलकर, काकासाहब (2001) "युगमूर्ति रवीन्द्रनाथ टैगोर "कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर,।
- मित्तल, एम.एल. (2006), उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षा, इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ।
- भाटिया, के.के. नारंग, सी.एल. (1984), शिक्षा के सिद्धांत तथा विधियां, प्रकाश ब्रदर्स, लुधियाना।
- पाण्डेय, रामशक्ल (2007), उभरते हुये भारतीय समाज में शिक्षा, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
- पाठक, पी.डी. (1977), भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
- राधाकृष्ण (2007) : "दा फिलासफी ऑफ आर. एन. टैगोर" मैकमिलन एण्ड कम्पनी इण्डिया लि0, 2005
- शर्मा, आर.ए. (2006), शिक्षा अनुसंधान, आर.लाल बुक डिपो, मेरठ।
- सक्सेना, सरोज (2007), शिक्षा के दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय आधार, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
- सरकार, भूपेन्द्रनाथ (2011) : "टैगोर दा एजूकेटर" एकेडमिक पब्लिशर्स, 5 ए, भवानी दत्तलेन, कलकत्ता।
- सूद, विजय (1991), आधुनिक भारतीय समाज में शिक्षा, भारत बुक सैन्टर : लुधियाना।
- वर्मा, वैधनाथ प्रसाद (2005): " विश्व के महान शिक्षा शास्त्री, "विहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पटना।
- वालिया, जे.एस. (2007), शिक्षा के सिद्धांत तथा विधियां, पाल पब्लिशर्स, जालन्धर।